GYANBODH

Volume: 1
Issue: 1
Sept - Oct 2024

भारतीय राष्ट्र के संदर्भ में असमानता: एक तार्किक दृष्टिकोण

(Inequality in the Context of Indian Nation: A Logical Approach)

डॉ. प्रकाश भा. साळवी
पूर्व सीनियर रिसर्च फेलो, आईसीएसएसआर, नई दिल्ली

---

1. विषय प्रवेश
2. तार्किक विमर्श
3. समानता क्या है?
4. समानता का संवैधानिक रूप
5. शिक्षा में समानता
6. सरकारी गतिविधियाँ
7. महिला शिक्षा का ऐतिहासिक विमर्श
8. साहित्य में महिला शिक्षा
9. जाति का मसला
10. धर्म का असली स्वरूप
11. उपसंहार
संदर्भ ग्रंथ सूची

---

1. विषय प्रवेश:

फ्रांसीसी क्रांति के बाद 'समानता' (Equality) का तत्त्व एक आदर्श तत्त्व बन चुका है। यह तत्त्व तथा संज्ञा सम्भवता सामाजिक आदर्शों में से सबसे अधिक विवादास्पद बन चुकी है। वैसे समानता 'न्याय' का एक व्यापक सिद्धांत है। समानता व्यापकता से 'सामाजिक न्याय' की ओर निर्देश करती है। असल में 'समानता' तत्त्व की खोज के बाद ही, 'असमानता' (Inequality) की परिभाषा को अंकित किया गया है। इससे पहले असमान व्यवस्था के बारे में हम उतने ज्यादा सजग नही थे। समानता के संदर्भ में शुरुआत में कुछ प्रश्न उपस्थित हुए है, जैसे: किसकी समानता?, किसके बीच समानता?, और कौन से अधिकारों के बारे में समानता?

'समानता' तत्त्व न्याय की अभिलाषा करता है। इसमें ज्यादातर 'सामाजिक न्याय' (Social Justice) निहित है। 'सामाजिक न्याय' के तहत हमने बरसो पहले से जाति, धर्म, वर्ग तथा लैंगिकता के आधार पर 'अ-समानता' की खोज की है। भारत में सामाजिक असमानता के और भी कई आयाम है जैसे: शक्ति, धर्म, रिश्तेदारी, प्रतिष्ठा, नस्ल, जातीयता, आयु और वर्ग के आधार पर संसाधनों का वितरण आदि।

2. तार्किक विमर्श:

हमें जाति, धर्म तथा लैंगिक असमानता के परिप्रेक्ष्य में तर्कसंगत सोच को अपनाने की जरूरत है। इसमें अहम बिंदु यह है की,

'अ-समानता' को किसने जन्म दिया?
हम जैसे है, क्या हमें प्रकृति ने बनाया है?

GYANBODH
Volume: 1
Issue: 1
Sept - Oct 2024

अगर हमें प्रकृति ने एक जैसा बनाया है, तो हम अपने आप को एक जैसा क्यों नहीं मानते?

हमें यहां 'असमानता' के संदर्भ में कुछ मुद्दों पर गौर करना होगा जैसे:

हमारी संस्कृति और समाज एक जैसी क्यों नहीं है?

हम अलग अलग पेहराव क्यों करते है?

हम काले, गोरे, नाठे, ऊँचे, बौने, ठिगने, जाड़े, पतले ऐसे क्यों है?

यह सब हमारे अलग-अलग समुदाय ने अपने लिए विकसित की गई भाषाएँ, हमारा आहार और हमारे रहन-सहन के तरीकों को अंजाम देने के लिए बनाये गए जाति तथा धर्म के नैतिक नियमों का परिणाम हो सकता है। या कुछ और भी हो सकता है जो कुदरती हो।

मेरा यह तर्क है, हम सभी विश्व भर के विभिन्न जगहों से एक ही जगह इकट्ठा हुए है, जिस जगह का नाम है भारतीय राष्ट्र। हम जानते है की, चित्रलिपि से होकर विश्व भर के कोने-कोने से कोने कोने से अलग-अलग भाषाएं आविष्कारित हुई है। ऐसा लगता है कि, सम्पूर्ण मानव जाति ने एक साथ अपनी-अपनी भाषा को आविष्कारित करने का प्रयास किया है। नतीजा यह है की, हम एक ही ग्रह पर अलग-अलग भाषाओं का इस्तेमाल करते हुए अपने-अपने अहम् को पाले अपनी-अपनी संस्कृति एवं सभ्यता को बरसों से ढोते चले आ रहे है।

प्रकृतिवादी चार्ल्स डार्विन ने उसकी अपनी किताब 'प्रजाति की उत्पत्ति' (The Origin of Species-१८५९) में कहा था, प्रजातियां समय के साथ बदलती हैं और वे पूर्वजों के उत्तराधिकार के माध्यम से उत्पन्न होती हैं। डार्विन के अनुसार, प्रजातियों के सामान्य पूर्वज होते हैं और समय के साथ परिवर्तन से गुजरते हैं जो उन पूर्वजों के आधार पर नई प्रजातियों को उद्भव की ओर ले जाते हैं। विकास पीढ़ी दर पीढ़ी जीवन के सभी रूपों में परिवर्तन की प्रक्रिया है। जैविक आबादी आनुवंशिक परिवर्तनों के माध्यम से विकसित होती है। इंसान और चिंपैंजी एक ही पूर्वज से अलग तरीके से विकसित हुए है। डार्विन ने अपनी पुस्तक 'द डिसेंट ऑफ मैन' (The Descent of Man'-1871) में यह विचार प्रस्तुत किया कि मनुष्य और वानर के पूर्वज एक ही थे।

पर आज बहुत सारे बुद्धिजीवियों ने डार्विन को चुनौतियां दी है। एक नए अध्ययन में कहा गया है कि, मनुष्य मगरमच्छ जैसे जानवरों से विकसित हुए हैं, जिनकी आंखें जमीन पर भोजन देखने में सक्षम हैं। वैज्ञानिकों का कहना है कि, लगभग 40 करोड़ साल पहले मछलियों को भूमि पर ले जाया गया था, जिससे उन्हें भोजन देखने की अनुमति मिली, जिसके कारण उनके अंगों का विकास हुआ। अध्ययन से पता चलता है कि मगरमच्छ जैसे जानवरों ने पहले जमीन पर मकड़ियों जैसा आसान-आसान भोजन देखा और बाद में अपने पैरों को विकसित किया। इलिनोइस में नॉर्थवेस्टर्न यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर मैल्कम मैकाइवर ने एक महत्वपूर्ण प्रश्न उपस्थित किया: हम 385 मिलियन साल पहले जमीन पर क्यों आए?

इससे कुछ महत्वपूर्ण चीजें हमारे सामने आती है:

शायद जमींन से पहले पानी में जीवों की उत्पत्ति हुई और भोजन ढूंढने वह जमीन पर आ गए।

क्या यह जरुरी है की हम किसी एक ही जानवर से विकसित हुए हो! या किसी एक ही बन्दर की प्रजाति से उत्क्रांत हुए हो।

हो सकता है की हम अलग अलग जानवर या किसी एक ही जानवर की भिन्न भिन्न प्रजातियों से उत्पन्न हुए हो।

सन १९४९ में प्रकाशित हुई हेनरी थॉमस की किताब 'The Story of Human Race' में उन्होंने कुछ तर्क प्रस्तुत किये है। मनुष्य को विकसित होने में करीब करीब चार करोड़ साल लगे है। करीब दस लाख वर्ष पूर्व पृथ्वी पर

हिमवर्षा हुई। इसी कारण सम्पूर्ण मनुष्य जाति पृथ्वी पर सभी ओर बिखर गई। पर क्या यह शत प्रतिशत सही होगा की मनुष्य पृथ्वी के किसी एक ही हिस्से में उत्क्रांत हुआ और फिर सम्पूर्ण पृथ्वी पर बिखर गया। ऐसा नहीं हो सकता की, सम्पूर्ण गृह पर अलग-अलग जगह हम सब एक साथ एक ही या विभिन्न कालों में विकसित हुए हो। अगर हम गहराई से सोचना चाहते है तो हमें इस पर गौर करना चाहिए।

मनुष्य ने उसकी विकास प्रक्रिया की शुरुआत में लोहे और पत्थर के नुकीले हथियार बनाये। क्यों की वह सिर्फ अपनी खुद की रक्षा और दूसरों का संहार करना जानता था। वन्य प्राणियों से, दूसरे गुट तथा समुदायों से खुद की रक्षा करना और आहार के लिए एक दूसरे के साथ लड़ाई करने के लिए उसे हथियारों की जरुरत थी। वह शिकार करके अपनी जीविका चलाता था। वेदकाल में भी निद्रा, भय, आहार और मैथुन को प्राथमिक आवश्यकताएँ माना गया था। जाहिर है कि हमारा आदिम समुदाय ठीक से नींद नही ले पाता था, उसके सामने आहार और मैथुन की समस्या थी और वह जंगली जानवरों से डरता था।

आजकल कोई किसीसे डरता नहीं, इसीलिए हमें अपने जीवन में हरदिन नयी-नयी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। क्यों की आजकल हमारी जरूरतें बदल गयी है। रास्ते, बिजली और पानी की जरूरतों के पीछे हम बहुत साल से पड़ चुके है। हमारी जनसँख्या बढ़ रही है, और जरूरते ख़त्म नहीं हो रही है। गांधी ने 'जरूरत' और 'लालच' (Need and Greed) में फर्क किया था। अतः हम अपने आप में उदास है, निराशा के भंवर में गोते लगा रहे है। यह हमारी सारी निराशा हम जाति, धर्म या किसी न किसी माध्यम से किसी और पर थोपने का प्रयास करना चाहते है, असल में यही सही बात है। बाकि अपनी मन की कल्पनाओं को वास्तविक रूप देकर उसके लिए लडते रहना सही बात नहीं है।

आजकल हमने युद्ध कला में महारत हासिल की है, आदिम मनुष्य को इस तरह की महारत हासिल नहीं थी। खाने के लिए शिकार करना और लडना इतना ही उसके जीवन का लक्ष्य था। फिर भी वह अ-संतुष्ट रहा। उसने अग्नि का आविष्कार किया। पर अब उसे किसी भी तरह जो खुद से ताकतवर हो, ऐसे किसी चीज की अभिलाषा थी। वह चाहता था की कोई सामर्थ्यवान शक्ति उसकी सहायता करे; जिसकी उसने अत्यधिक आवश्यकता महसूस की थी और इसलिए उसने उसके जीवन का सबसे महत्वपूर्ण आविष्कार किया- 'He created a God'। उसने ईश्वर का निर्माण किया था। ईश्वर का शोध किसने किया, कैसे किया इसके बारे में आज तक विविध प्रकार के तर्क किये गए है।

उदाहरण के तौर पर हम एक तर्क प्रस्तुत करेंगे:

आदिकाल के एक मनुष्य ने अपने आप को पहली बार पानी में देखा। वह अचंभित रह गया। क्योंकि उसने अपना खुद का चेहरा कभी नहीं देखा था। चूँकि उसे यह पता नहीं था कि, पानी में दिखाई देनेवाला वह स्वयं है। उसने पानी में दिखी प्रतिमा को जैसे कोई 'महान' मान लिया। वह मन ही मन में उसकी पूजा करने लगा। उसे हमेशा उसकी याद सताने लगी। वह उसे पाना चाहता था। पर वह हाथ नहीं आता था। आगे जाकर वह उससे डरने भी लगा। उसकी श्रद्धापूर्वक निरंतर पूजा करने लगा। उसने अपना ईश्वर बना लिया था।

ग्रीक दार्शनिक हेरक्लिटस कहते है, "बैल अगर चित्र बना सकता, तो वह 'भगवान' के नाम पर दूसरे एक 'बैल' का ही चित्र बना लेता"।

कुछ काल के पश्चात् वह अपने एक मित्र को पानी के पास ले गया। दोन्हो ने एक दूसरे को पानी में देखा। उनके मन में ख्याल बवाल मचाने लगे। प्रश्न एक ही था: वह दूसरा कौन है?

आगे जाकर उसमे से एक मर गया। दूसरे ने मरे हुए को जला दिया। सवाल यह था की उसे कैसे पकड़े जो मरे हुए का हमशक्ल था। परन्तु ना जाने क्यूँ उसे भी जलाना जरुरी लग रहा था। सोचते-सोचते उसका दिमाग चकराने लगा, वह बीमार पड़ने लगा। उसे लगा जो पकड़ में नहीं आ रहा वह छुपकर उसे तकलीफ दे रहा है। अब उसने ने दूसरा

अनुसंधान किया था: जिसका नाम था 'आत्मा'। आगे जाकर उसने आत्मा का वर्गीकरण किया, बुरी आत्मा और अच्छी आत्मा। उसने अपनी धारणाएं बना ली, बुरी आत्मा तकलीफ देती है और अच्छी आत्मा मदद करती है। बुरी आत्मा की अवकृपा होनेपर वह मनुष्य के ऊपर बीमारी और मृत्यु के रूप में हावी हो जाती है।

अब वह सोचने लगा की इससे कैसे निजात पाए! कुछ समझदार लोग आगे आये। उन्होंने तय किया की इसके ऊपर सोचकर निजात पाने की कोशिश करनी चाहिए। आगे जाकर वह लोग धर्मोपदेशक, धर्म प्रचारक हो गए। वह बुरी आत्मा की अवकृपा न हो इसलिए क्या करना चाहिए, क्या नहीं करना चाहिए यह पुरे समाज को बताने लगे। धीरे धीरे उन्होंने धर्म, प्रार्थना, पूजा विधि आदि के नियमों को आकार दिया। पुरे समाज को अपनी आज्ञा में रखा। उनकी आज्ञा से पूजा विधि होने लगे। पूजा विधि में तर्क वितर्क होने लगे। श्रद्धा और अंधविश्वास को बढ़ावा मिला। आज हम श्रद्धा और अंधविश्वास में फर्क करने में असफल है। इसी कारण हमें असली मानवता का साक्षात्कार नहीं हो पा रहा है। हम समानता और असमानता के बीच खुद को ढूंढने की कोशिश कर रहें है।

3. समानता क्या है?

'समानता' शब्द ने हमारे अंदर की 'असमानता' को उजागर किया है। जैसे, हम किन-किन चीजों से एक दूसरे से अलग है। इसके पहले (१७८९-९२ तक) हमने असमानता के ऊपर ज्यादा गौर नहीं किया था। गौर से देखा जाये तो फलों और फूलों में भी, पशु और पंछियों में भी अलग-अलग जाति (Caste) - प्रजातियां (Race) है। उदहारण के तौर पर हमें भेड़-बकरी के जाति के कई जानवर मिल सकते है। जैसे सांभर, चिंकारा, कृष्णमृग, हिरण आदि। एक जैसे, एक ही जाति तथा प्रजाति के अलग अलग फूल और पौधे भी हो सकते है, तो 'मानव' प्रजाति के अलग अलग रूप क्यों नहीं हो सकते? अतः यह एक काल्पनिक प्रश्न (Hypothetical Question) है। पर यह विचारधारा भी आजकल जन्म ले रही है। पर हम जानते हैं कि; इस तरह का विचार मानवता के लिए एक चुनौती है। इस तरह के विचार को किसी एक सामाजिक, राजनीतिक तथा धार्मिक विचारधारा का अनुकूलन हो सकता है। इसके लिए आगे जाकर किसी एक या अधिक साम्प्रदायिक विचार का आधार भी लिया जा सकता है। यहाँ हमें लग सकता है कि, हमारे बीच के भेद प्रकृति ने रचाएँ है। हम इंकार भी नहीं कर सकते। पर पूरी तरह से स्वीकार भी नहीं कर सकते। इसके ऊपर मेरा कहना है, 'हम मानव है, इसलिए हम समान है' (We are Human, therefore we are Equal) I इस पर ज्यादा गौर करना आज की जरूरत है। 'मानवीय एकता' (Human Unity) या 'मानव में अखंडता' (Integrity in Human) के ऊपर गौर करते हुए हमें यह खोज करनी है कि, ऐसा कौन सा तत्त्व है जो किसी भी हालात में मनुष्य को मनुष्य से अलग नहीं कर सकता?

वह एक ही तत्त्व है, 'हमारी सोचने की शक्ति' (Thinking Power)I विचारक जे. कृष्णमूर्ति ने कहा था कि 'मानव का विचार' (Human Thought) उसके बुद्धि की गति है। तो हम इस गति को 'मन' (Mind) क्यों न समझें! आगे कहा जा सकता है कि यदि हम 'मन' को अपनी छठा इंद्रिय (Sixth Sense) मानें और इस इंद्रिय द्वारा हमें ज्ञान की प्राप्ति होती है, तो क्या यह मन जो ज्ञान का स्रोत है, सभी जीवों में देखा जाता है? यदि सोचने वाला मन प्राकृतिक सौंदर्य और अन्य मनुष्यों की विभिन्न वृत्तियों की तरफ आकर्षित होता है, तो यह अन्य धर्मों और भिन्न जातियों के लोगों को 'मनुष्य' के रूप में आकर्षित क्यों नहीं कर सकता है? ऐसा कौन सा तत्त्व है जो हमें बरसों से मानवता की तरफ हमारे बढ़ते क़दमों को रोख रहा है? सिर्फ जाती, धर्म और उनके बनाये नियमों के आधार पर मन में बैठी हमारी गलत धारणाएँ (Assumptions) और कुछ भी नहीं है। हमारी भिन्न कल्पनाएँ तथा हमारे अपने विचारों का समेकन 'धारणा' (Assumption) है। बरसों पहले से हमारे धर्म या जाति सम्बन्धी हमारी कुछ पूर्व मान्यताएँ है। जिसका पुख्ता प्रमाण न होते हुए भी हमने उन्हें सत्य मन लिया है। हमें चाहिए की इन सबसे दूर रहकर हम मानवता की ओर बढे। हमें प्रकृति ने

सोचने का, भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त होने का, दूसरे के प्रति सहृदयता से व्यवहार करने का जो वरदान दिया है, वही एक वरदान हमें 'एकता' की ओर ले जा सकता है, जिससे 'मानवता' जैसे वैश्विक मूल्य का जन्म होता है। 'मानव' मूल्य का परिपोषण करना ही 'असमानता'
तत्त्व का आधार है।

4. समानता का संवैधानिक रूप:

'समानता' एक व्यावहारिक तत्त्व है, जो हमें भारतीयता के दृष्टि से एक दूसरे के साथ जुड़े रहने पर मजबूर कर देता है। संवैधानिक रूप से समानता हमारे मानवीय अधिकारों (Human Rights) से जुड़ा तत्त्व है। 'समानता' को हमारे संविधान की प्रस्तावना और भाग ३ में अच्छी तरह से परिभाषित किया है। इस प्रावधान के अंतर्गत महिलाओं को लिंग भेद के आधार पर होने वाले किसी भी भेदभाव के खिलाफ सुरक्षा प्रदान की गयी है। संविधान का अनुच्छेद १५/१ कहता है की, राज्य को किसी भी नागरिक के साथ धर्म, नस्ल, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव नहीं करना चाहिए। अनुच्छेद १६/१ एवं २ सामान्य तौर पर भेदभाव करने पर रोक लगाता है। अनुच्छेद १५/३ के तहत 'राज्य' महिलाओं और बच्चों के लिए विशेष प्रावधान कर सकता है। महिला महाविद्यालयों में महिलाओं को प्राथमिकता रखना अनुच्छेद १४ तथा १६ का उल्लंघन नहीं माना जायेगा। अनुच्छेद ५१-अ के अनुसार महिलाओं के सम्मान के लिए अपमानजनक कार्यक्रम की निंदा करनी है, सराहना नहीं करनी है।

5. शिक्षा में समानता:

सन १९४८ के विश्विद्यालय शिक्षा आयोग ने लड़कियों व महिलाओं की शिक्षा के महत्त्व पर जोर दिया है। सन १९५२ के मुदलियार आयोग ने सूचित किया है की, शिक्षा एवं रोजगार के क्षेत्र में 'लिंग' के आधार पर किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जा सकता। सन १९६४ के कोठरी कमीशन ने उन सभी सिफारिशों को अमल में लाने का सुझाव दिया; जो सिफारिशें श्रीमती दुर्गाबाई देशमुख के अध्यक्षता में राष्ट्रीय शिक्षा समिति, श्रीमती हंसा मेहता समिति और श्री. एम्. भक्तवत्सल्यम् समिति ने की थी।

सन १९७१ में महिलाओं की स्थिति पर एक समिति का गठन किया था, इस समिति के निर्देश पर 'समानता की ओर' (Towards Equality) शीर्षक से अपनी रिपोर्ट १९७४ में पेश की। इस रिपोर्ट में महिलाओं की सामाजिक स्थिति, उनकी शिक्षा और रोजगार के सन्दर्भ में संवैधानिक, क़ानूनी और प्रशासनिक प्रावधानों पर जाँच पड़ताल करना आवश्यक समझा गया था।

सन १९८६ की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में महिलाओं की समानता हेतु शिक्षा का प्रावधान किया गया है। इस शिक्षा नीति का कहना था की, लड़कियों की शिक्षा पर बल केवल सामाजिक न्याय के कारण नहीं अपितु इसलिए देना होगा, क्योंकि यह सामाजिक रूपांतरण को गति प्रदान करता है। प्रोग्राम ऑफ़ एक्शन (१९९२) और राष्ट्रीय महिला सशक्तिकरण नीति (२००१) को लड़कियों की शिक्षा और लिंग आधारित भेदभावों की बात करने वाले बहुत ही महत्वपूर्ण दस्तावेज माना जाता है।

6. सरकारी गतिविधियाँ:

आज तक महिलाओं को मुख्य प्रवाह में लेने के लिए,

१. महिला समाख्या

२. कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय योजना

३. गौरा देवी कन्याधन योजना

४. बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ योजना

५. राष्ट्रीय महिला सशक्तीकरण मिशन
६. सर्व शिक्षा अभियान
७. जेंडर बजेटिंग पहल और
८. उड़ान जैसे विभिन्न कार्यक्रमों का निर्माण एवं कार्यान्वयन किया गया है।

महिला शिक्षा के आद्य प्रवर्तक महात्मा फुले ने कहा था, 'एक औरत के न सीखने का मतलब है कि, आधे समाज को अशिक्षित रखना। एक औरत साक्षर हो जाये तो वह पुरे परिवार को शिक्षित कर सकती है'।

7. महिला शिक्षा का ऐतिहासिक विमर्श:

वैदिक काल में स्त्रियों के लिए शिक्षा का प्रयोजन किया गया था। प्राचीन भारत में महिलाओं को, चाहे वे किसी भी जाति की हो, उसे अपनी क्षमताओं के अनुसार शिक्षा ग्रहण करने की पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त थी। उस समय शिक्षा सार्वभौम थी और समाज के सभी वर्गों के लिए खुली थी। उन दिनों शिक्षा मुख्य रूप से साहित्यिक और धार्मिक विषयों तक ही सीमित थी। इस काल में कुछ महिलाओं ने वैदिक मन्त्रों की रचना की थी। कुछ महिलाओं ने दार्शनिक चर्चाओं में भाग लिया था। हमें गार्गी, मैत्रेयि, लीलाबती, अत्रेयी और सुलभा जैसी कई महिला विद्वानों के सन्दर्भ मिलते है।

बुद्ध काल में शुरुआत में स्त्रियों के लिए शिक्षा का प्रयोजन नहीं था। लेकिन एक 'आनंद' नामक बौद्ध भिक्खु के कहा नुसार बुद्ध ने महिला शिक्षा के लिए अनुमति दी थी। इस काल में बहुसंख्य महिलाएँ प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करती थी। लेकिन कुछ महिलाओं को निश्चित रूप से उच्च दार्शनिक ज्ञान और सांस्कृतिक सिद्धि प्राप्त करने की स्वतंत्रता थी।

लेकिन हमारे भारतवर्ष में लगभग ईसा पूर्व २०० तक महिलाओं ने अपनी शैक्षिक स्वतंत्रता और विशेषाधिकार पूरी तरह से खो दिए थे। उन्होंने अपना समाजिक दर्जा खो दिया था। उनके शैक्षिक अधिकार काफी हद तक प्रतिबंधित कर दिए गए थे।

हालांकि, महिलाओं की शिक्षा अभी भी अमिर, सुसंस्कृत, अच्छे और कुलीन परिवारों में जारी थी। वे निजी शिक्षक के अधीन शिक्षा प्राप्त करती थी। इस तरह की शिक्षा में घरेलू कलाएं, ललित कलाएँ जैसे संगीत, नृत्य, छपाई, सजावट आदि विषय सिखाये जाते थे। यह महिलाएँ संस्कृत तथा प्राकृत की देवनागरी लिपि लिख-पढ़ सकती थी। पर महिला शिक्षा की इस गिरावट के बावजूद दक्षिण भारत की कुछ महिलाएँ जैसे रवा, रोहा, माधाबी, अनुलक्षी, शशिप्रदा आदि शिक्षित थी। इसके लिए हम हर राज्य के उदाहरण दे सकते है।

8. साहित्य में महिला शिक्षा:

१८ वी सदी के बांग्ला कवी भरतचंद्र की कविता 'विद्यासुंदर' में हम राजकुमारी विद्या का सन्दर्भ पाते है, जो पढ़ी लिखी है। बंगाल में १६ वी सदी से १८ वी सदी तक माधवी, चंद्रावती, प्रियंवदा, आनंदमयी आदि महिलाओं के उल्लेख मिलते है। इन महिलाओं ने साहित्यिक तथा दार्शनिक चर्चा में रुचि ली थी। इस कल में शाही दरबारों में नृत्य करने वाली नर्तकी तथा महिला गायकों के भी उदाहरण मिलते है।

मध्ययुगीन साहित्यिक कृति 'तच्छवती हरण' में हम एक ही शिक्षक के अधीन नायक ब्रह्मा को उसकी नायिका के साथ पढ़ता हुआ पाते है। 'शससिसेना' में हम राजकुमारी शससिसेना को अपने प्रेमी अहिमानिकेय के साथ पढ़ते हुए पाते है।

अकबर और जहांगीर के समकालीन केशब दास की कहानी से हमें पता चलता है की, 'ओरछा' के शासक इंद्रजीत सिंह के दरबार में छ प्रतिभाशाली महिला गायिकाएं थी। बंशी दास के 'मनसामंगल' और घनाराम चक्रवर्ती के 'धर्ममंगल' में हमें अत्यधिक सुसंस्कृत महिला संगीतकारों के उदाहरण मिलते है। मुकुंदराय के कवी 'कंकणचण्डी' से हमें पता चलता है कि, १६ वी सदी में हिन्दू समाज की स्थिति महिला शिक्षा के लिए पूरी तरह प्रतिकूल नहीं थी। लगभग

देश के सभी राज्यों में यही स्थिति थी। उन दिनों शिक्षा और साहित्यिक रुचि में बंगला के साथ महाराष्ट्र अग्रेसर रहा है।

उन दिनों कई महिलाओं ने कीर्तन, यात्रा लोकगीत आदि के माध्यम से शिक्षा प्राप्त की थी। इस काल में महाकाव्यों और पुराणों का अध्ययन भी लोकप्रिय रहा है। फिर भी स्त्री शिक्षा में तीव्र गिरावट थी। इस दरम्यान हिन्दू लड़कियों के लिए कोई अलग स्कूल मौजूद नहीं थे। केवल प्राथमिक शिक्षा स्तर तक उन्हें लड़कों के साथ पढ़ाया जाता था।

मध्यकाल में हमारे देश की महिलाओं की साक्षरता की गिरावट बहुत ही तेज रही है। सन १९ वी सदी की शुरुआत तक शायद ही सौ में से एक महिला लिख-पढ़ सकती थी। ९९ प्रतिशत से अधिक महिलाएं अब निरक्षर थी। हम जानते है, १९ वी सदी में डॉ. अय्याथन जानकी अम्मल (1881-1945) केरल और मालाबार क्षेत्र की पहली महिला चिकित्सक थीं।

हिन्दू -मुस्लिम दोनों परिवारों में लड़कियों की कम उम्र में शादी होना उनकी शिक्षा के लिए एक बढ़ी बाधा थी। 'अकबरनामा' में अबुल फजल ने बाल-विवाह की प्रथा का उल्लेख किया है। विवाहित लड़कियों को अपने परिवार के दायरे से बाहर जाने की कोई स्वतंत्रता नहीं थी।

शादी के बाद हिन्दू-मुस्लिम दोनों लड़कियों के पास साहित्यिक या बौद्धिक गतिविधियों के लिए बहुत कम समय और अवसर मिलता था। मुस्लिम समाज में सैद्धांतिक रूप से प्रत्येक पुरुष और महिला के लिए शिक्षा आवश्यक थी। लेकिन सामान्य रूप से मुस्लिम लड़कियों के पास शिक्षा प्राप्त करने के लिए बहुत कम समय था। आज की स्थिति अलग है।

9. जाति का मसला:

जैसे की हम जानते है प्राचीन भारत से पुजारी लोग, शासक तथा प्रशासक लोग, कारीगर, व्यापारी तथा किसान लोग और श्रमिक जैसे चार वर्ग आज भी भारत में मौजूद है, जो की वर्णाश्रम पद्धति के नाम से परिचित है। आज सभी मानविय समुदायों में सबसे ऊपर तो पुजारी तथा धर्मोपदेशक है। कई विकसित राष्ट्रों में तो ईसाई मंत्रालय (Christian Ministry) का भी निर्माण किया गया है। भारत में औपनिवेशीकरण काल में ब्रिटिश प्रशासक तथा ईस्ट इंडिया कंपनी के साथ ईसाई मिशनरी लोगों का शिक्षा, धर्म और आरोग्य प्रचार में बहुत सारा योगदान रहा है, हम जानते है।

महात्मा गांधी कहते थे की 'हम सभी को मानवता की ओर चलना चाहिए। 'साथ ही उन्होंने कहा था, 'श्रमजीवी और बुद्धिजीवी लोगों के बीच की दरार को मिटाकर हम समानता की ओर प्रस्थान करें। शिक्षा आत्मनिर्भर हो, सभी के लिए एक जैसी हो'।

विवेकानन्द जी ने 'विश्वबन्धुत्त्व' की ओर इशारा किया था। तथा योगी अरविन्द ने 'अतिमानस' की ओर निर्देश किया था। उन्होंने वैश्विक भाईचारे को बढ़ावा देकर विश्व की सम्पूर्ण मानवजाति को 'समानता' के धागे में बाँधने की पुरजोर कोशिश की थी।

धर्म सिर्फ हमारी एक सभ्यता है, संस्कार है और जीवन जीने की एक रीत है। यह कबूल करते हुए हमें वैश्विक भाईचारे के बारे में सोचना चाहिए। जब तक हम अपने धर्म तथा जाति के वैचारिक धरातल पर जीवन-यापन करते रहेंगे तब तक 'मानवता' मूल्य की तरफ हमारे कदम नहीं बढ़ सकते। हम जानते है, अपने धर्म तथा जाति के बारे में हम स्वयं ज्यादा सजग रहते है। यह हमारे अस्तित्व तथा अस्मिता का विषय बन चुका है। आज भी धर्म-जाति के नाम पर चल रहा सामाजिक जीवन और राजकीय संघर्ष हम अनुभव कर पा रहे है। अपितु कहा जाता है कि, जाति व्यवस्था की उत्पत्ति को प्राचीन भारत में पाया गया है। पर ऐसा भी कहा जाता है कि, यह व्यवस्था महज एक कर्म का विभाजन था। इस काल में सभी को समान न्याय मिलने की ज्यादा संभावना रही है।

ब्रिटिश राज में हमारे धर्म और जाति को नया आयाम मिला। हमारे जाति-धर्मों के नामों को सरकारी दफ्तरों में कैद करके रखा गया। आज हम उससे छुटकारा नहीं पा रहे है। केरला में शैक्षणिक वर्ष 2017-18 में 1.24 लाख से अधिक छात्रों ने खुद को किसी विशेष धर्म या जाति से संबंधित नहीं बताया। देश में बढती हुई धार्मिक असहिष्णुता के बीच धर्मनिरपेक्षता के लिए एक नया मानदंड स्थापित करते हुए, केरल ने अपने स्कूलों में 'धर्मनिरपेक्ष' छात्रों की प्रभावशाली संख्या दर्ज की है। यह हमारे देश के लिए बहुतही गौरवशाली बात है। राज्य विधानसभा में एक लिखित जवाब में, केरल के शिक्षा मंत्री प्रोफेसर सी रवींद्रनाथ ने कहा था कि, इस साल राज्य में 1.24 लाख छात्रों ने प्रवेश के समय जाति और धर्म के कॉलम को खाली छोड़ दिया है। कक्षा 1 और 10 के बीच के 1,23,630 छात्रों ने कहा कि उनकी कोई जाति या धर्म नहीं है, कक्षा 11 और 12 में ऐसे छात्रों की संख्या क्रमशः 278 और 239 थी। यह आंकड़ा केरल के समाज की धर्मनिरपेक्ष बनावट का प्रमाण है।

पिछले कुछ वर्षों में, केरला में खुद को गैर-धार्मिक घोषित करने वाले लोगों की संख्या में वृद्धि हुई है और अपने बच्चों को बड़े होने पर अपना धर्म चुनने की अनुमति दी गई है। इससे यह साबित होता है कि, धर्म केवल एक विचार है; सोच है, जिसे हम अपने मर्जी से चुन सकते है और जन्म से कोई धार्मिक नहीं होता।

प्राचीन काल में कर्म के आधार पर चार वर्गों का निर्माण किया था। आज यह व्यवस्था नए सिरे से हमारे सामने प्रस्तुत हुई है। जैसे, प्रथम श्रेणी, द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी वर्ग। आज के इन चार वर्गों को कर्म के अनुसार सरकारी दफ्तरों में बाँटा गया है। क्या हमें जाति प्रथा जैसी व्यवस्था से उनकी तुलना करनी चाहिए! इस पर भी गौर करना चाहिए। क्यों की यह 'मानवता' मूल्यों से सम्बन्धित मसला है। भारतीय उपमहाद्वीपों के अन्य क्षेत्रों और धर्मो में भी जाति आधारित मतभेद प्रचलित है। भारतीय प्रभावों के साथ, जाति व्यवस्था बाली और कम्बोडिया, लाओस और थाईलैंड में भी प्रचलित है। हमें चाहिए की हमारे बीच मतभेद (Differences In Opinion) हो, गलत नहीं है। पर मन-भेद (Differences of Mind) नहीं होने चाहिए। हम अपनी खुद की बनाई प्रथाओं को लपककर बैठे है, हमें प्रकृति द्वारा 'मानव' और 'मानवता' का जो सम्मान मिला है, उसे खो रहे है।

अगर हमारी जाति व्यवस्था हमारे परंपरागत व्यवसायों पर टिकी हुई है, तो हमें हर किसी के काम को सम्मान देना होगा, जो की उसने अपने आजीविका के लिए चुना है।

विश्व भर की प्राकृतिक विविधता का प्रदर्शन करने वाला भारत एक ऐसा महाद्वीप है जिसमें हर कोई अपनी भाषा, कला और संस्कृति का रक्षण करते हुए जीवन बसर कर रहा है, असल में यही भारतीयता है।

10. धर्म का असली स्वरूप:

कोई भी धर्म हिंसा का समर्थन नहीं करता। सभी धर्म के दर्शन अहिंसा, शांति, सत्य का पाठ पढ़ाते हुए सांप्रदायिक सौहार्द्र (Communal Harmony) चाहते है। कोई भी धर्म ईश्वरनिर्मित नहीं, सभी धर्म मानवनिर्मित है। धर्म हमारे सामाजिक जीवन की प्रेरणाएँ है। ईश्वर के बारे में हमारी अपनी अलग-अलग मान्यताएं होने के कारण हम हिंसक हो जाते है। धर्म का रक्षण करने का वायदा करने वाले लोग एक गलत धारणा पाले बैठे है। कोई भी मजहब आपस में बैर न रखने के बारे में कहता है, तो किसी भी धर्म की रक्षा के लिए हम हिंसा क्यों करते है?

धर्म एक जीवनप्रणाली है, जो की विशिष्ठ मानविय समुदाय ने अपने सामाजिक जीवन के लिए बनाई हुई एक आचार संहिता है। किसी भी धर्म से जुड़ा ज्ञान और दर्शन महत्वपूर्ण है, जो हमें मानवता की राहपर चलना सिखाता है। पर किसी भी मजहब के ज्ञान दर्शन के साथ जुडी हुई गलत धारणाएँ हमारे बिच संदेह और दरारे पैदा करती है। हमें इसका ध्यान रहें कि हम पहले इंसान है, बाद में किसी मजहब को आगे ले जाने वाले अनुयायी है। हम धर्म के लिए नहीं है, हम धर्म की रक्षा के लिए नहीं है, धर्म हमारी मानवता की रक्षा (Protiection of Humanity) के लिए है।

हमें कोई भी धार्मिक कथा आखिर में जीवन का आदर्श पाठ पढ़ाती है। किसी भी धर्म का जो भी आदर्श है, वह सभी मानवजाति के लिए स्वीकरणीय होना चाहिए। आदर्श-आदर्श ही होता है, जिसे हम एक दिव्य सन्देश माने तो वो सभी मानवजाति के लिए स्वीकार्य होना चाहिए। ऐसा नहीं की यह अच्छी बात है, लेकिन किसी और के धर्म ग्रंथो में कही है, इसलिए गलत है। हमारी मान्यताएं ज्यादातर अपने खुद के अनुभव तथा ख्यालों पर निर्भर होती है। अगर मैं कहूं कि 'यह मनुष्य झूठा है', तो यह बात पूरी तरह से सही नहीं होती। क्योंकि यह एक मेरे अकेले की धारणा है। उस मनुष्य के बारे में किसी और का ख्याल अलग या अच्छा हो सकता है। इसलिए हमें खुद की धारणाओं का परदे से झाँककर चीजें, मनुष्य तथा किसी भी तरह के ज्ञान का मूल्यांकन नहीं करना चाहिए। सही की पहचान के लिए हमें तटस्थ और तृतीयक या निष्पक्ष होकर सोचना चाहिए। इसे ही हम एक तर्कसंगत सोच कहेंगे, जिसकी आज हमें जरूरत है।

11. उपसंहार:

हमारे आदिम मनुष्य ने ईश्वर, आत्मा और भूतों का अविष्कार किया है। यह सब चीजे अमूर्त होने के कारण वह इन सबसे डरने लगा था। उसने अपनी रक्षा की जिम्मेदारी भगवान के ऊपर छोड़ दी थी। इसलिए उसने भगवान के हाथों में हथियार दिए। वह इस बात से भी डरने लगा की कुछ गलत किया तो भगवान हमें सजा देगा। इसलिए उसने अपने लिए कुछ नैतिक नियम बनाएं। उस नैतिक नियमों को उसने सार्वजनिक मान्यता प्राप्त कराने का प्रयास किया। जिस विचार को इसतरह की मान्यता मिली वह नैतिक विचार धर्म के रूप में आगे आया। धर्मो ने अपने ग्रन्थ बनाये। अनेक भूप्रदेशों में अनेक धार्मिक विभूतियाँ और उनके कारण अनेक धार्मिक विचार उभर आये। उन धर्मों की आचार संहिता बन गयी। एक विशिष्ट प्रकार की संस्कृति का जन्म हुआ। विशिष्ट पोशाक धारण करके मनुष्य ने अपने आपको धर्म की सीमाओं में कैद कर दिया।

इतना ही नहीं, प्राकृतिक घटनाएँ और भू-भाग, उपलब्ध भोजन, विविध प्रकार के अनाज पैदा करने वाली कृषि भूमि आदि सभी ने उसके जीवन को प्रभावित किया। यद्यपि मनुष्य सर्वत्र एक ही है, तथापि वह भिन्न आचार, विचार, रूप और रंग के रूप में प्रकट हुआ। इन भिन्नताओं के कारण कुछ ऐसे मसले जैसे; अपने समुदाय की सुरक्षा, जीवन की सुरक्षा, भोजन की सुरक्षा, स्पर्धा और संघर्ष, आपसी द्वेष और ईर्ष्या ने जन्म लिया। मनुष्य हजारों वर्षो से अपने धर्म और संस्कृति को अपनाकर इन प्रश्नों को हल करने का प्रयास कर रहा है। लेकिन ये समस्याएं बढ़ती ही चली गई। ये सभी प्रश्न जाति, वर्ण, समुदाय, क्षेत्र, राज्य, राष्ट्र और उसकी सीमाओं के रूप में जटिल हो गए। इन सभी समस्याओं को किसी बिंदु पर समाप्त करने के लिए 'सर्वधर्म समभाव' के मूल्य को छात्र जीवन से ही मन में बिठाना आवश्यक है।

सूरह अल-हुजुरात आयत: 13 में लिखा है: 'सांप्रदायिक सद्भाव' (Communal Harmony) सभी समुदायों के लोगों के लिए सौहार्द और प्रेम की भावना है। इस्लाम शांति और सद्भाव का धर्म है। इस्लाम का लक्ष्य समाज में शांति और सांप्रदायिक सद्भाव को मजबूत करना है। सभी इंसान एक ही पुरुष और महिला से हैं।

विश्व की सभी संस्कृतियाँ जीवन के किसी न किसी दर्शन पर आधारित हैं। भारतीय संस्कृति आध्यात्मिक दर्शन से प्रभावित है। जैसा कि भारतीय संस्कृति भगवद गीता से गहराई से प्रभावित है। भगवद-गीता रेखांकित करती है कि सभी जीवित प्राणियों में एकता है क्योंकि भगवान सभी में निवास करते हैं। मनुष्य की प्रकृति का सार या हमारी मूल प्रकृति या शुभ दिव्य जो है; सभी में समान है। एक आदमी और दूसरे के बीच अंतर केवल हमारे अधिग्रहीत प्रकृति या संस्कारों के कारण होता है जो प्रत्येक व्यक्ति में अलग-अलग होते हैं। जैसा कि हमारी मूल प्रकृति सभी में समान है, भारत विविधता में एकता के लिए खड़ा है जो वैश्विक शांति और सद्भाव का मार्ग प्रशस्त करता है।

भारतीय राष्ट्र एक 'सांप्रदायिक सौहार्द्र' में विश्वास रखने वाला शांतिप्रिय राष्ट्र है। 'वैश्विक भाईचारे' के साथ टैगोर, गांधी, विवेकानंद और योगी अरविन्द ने राष्ट्रवाद का पुरस्कार किया था। भारतीय राष्ट्र के दृष्टि से सोचा जाए तो

हमें राष्ट्रवाद के साथ 'वैश्विक भाईचारे' पर सोचना चाहिए। जब राष्ट्र की बात आती है, तो समानता, असमानता जैसे व्यावहारिक पहलुओं पर जोर न देते हुए हमें एक राष्ट्रीय मानव (National Human) के रूप में हमें उभर आना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1. श्री. ह. दीक्षित, 'भारतीय तत्वज्ञान', (मराठी किताब), (२०१५) जेनेरिक प्रकाशन, पुणे.
2. साने गुरुजी, 'मानवजातीची कथा', (१९४९, २००४, २०२२) (हेन्री थॉमस यांच्या या पुस्तकाचा अनुवाद), अनुवादक- साधना प्रकाशन, पुणे.
3. प्रकाश साळवी (डॉ.), 'मूल्यविचार और जीवनकौशल्ये' (मराठी किताब), (2021) ऋग्वेदाज लैंग्वेज स्टूडियो प्रकाशन, पुणे.
4. निरंतर कोठारी आयोग रिपोर्ट, भारत सरकार का दस्तावेज, जेंडर और शिक्षा रायडर, भाग १, शिक्षा विभाग, नई दिल्ली.
5. भारत सरकार, राष्ट्रीय शिक्षा नीती, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, शिक्षा विभाग, नई दिल्ली.
6. राष्ट्रीय महिला सशक्तीकरण नीती, (२००१)
7. कस्तुरबा गांधी बालिका विद्यालय योजना
8. गौरा देवी कन्यादान योजना
9. महिला समाख्या
10. GoI., Mudliyar Commission Report: Report of the Secondary Education Commission, Ministry of Education.
11. GoI., (1975), Towards Equality: Report of the Committee on the Status of Women in India, Delhi: Department of Social Welfare, Government of India.